वर्ष 16, अंक 9, मई 2023 ISSN: 2277-7857

समकालीन हस्तक्षेप

साहित्य, समाज और संस्कृति की पूर्व-समीक्षित मासिक शोध-पत्रिका

संपादक
डॉ. कपिल कुमार गौतम

अनुक्रम

वर्ष: 16, अंक: 9, मई 2023

सम्पादकीय

1.	पर्यावरण संरक्षण में आदिवासी संस्कृति एवं परम्पराओं की भूमिका	डॉ० स्निग्धा रावत, हिमांशु प्रभाकर	8-12
2.	वैश्वीकरण के दौर में जनजातीय समाज: समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण	धीरज प्रताप मित्र, अवधेश कुमार	13-19
3.	मीडिया के बदलते स्वरूप का वर्तमान समाज पर प्रभाव	प्रो. चंदा बैन	20-23
4.	बुन्देलखण्ड की कला, संस्कृति एवं साहित्य : एक अनुशीलन	प्रो. नागेश दुबे, डॉ. मोहन लाल चढ़ार	24-29
5.	पारंपरिक नाट्य परंपरा का स्वरूप एवं रंगमंचीय आलेख	डॉ. संजीब कुमार	30-35
6.	देवेन्द्र सत्यार्थी का उपन्यास और कला जगत	स्मृति कुमारी	36-39
7.	प्रेमचंद का समकालीन नारी उत्थान	डॉ. देवपाल सिंह बैरवा	40-43
8.	मीराबाई के काव्य में प्रतिरोध के स्वर	डॉ. सुजाता मिश्र	44-47
9.	आधुनिक विश्व में मानवता की रक्षक श्रीमद्भागवत गीता का सांस्कृतिक अध्ययन: विश्व बंधुत्व के महामंत्र 'वसुधैव कुटुंबकम्' के विशेष सन्दर्भ में एक विश्लेषण	धीरज कु. निर्भय	48-52
10.	नई शिक्षा नीति 2020 विभिन्न बदलाव और मूल्यांकन	नेहा शर्मा	53-55
11.	बदलता भारत : आदिवासी विकास के मुद्दे और चुनौतियां	डा. नीलांजना जैन, पूजा गुप्ता	56-61
12.	भूमण्डलीकरण और असग़र वजाहत की कहानियाँ	प्रेमचन्द्र	62-65

समकालीन हस्तक्षेप

साहित्य, समाज और संस्कृति की पूर्व-समीक्षित मासिक शोध-पत्रिका

SJIF 2023 = 7.858, **ISSN:** 2277-7857
वर्ष: 16, **अंक:** 9, मई 2023
ई-मेल: issn22777857@gmail.com
वेबसाइट: www.hastakshep.co.in

बुन्देलखण्ड की कला, संस्कृति एवं साहित्य : एक अनुशीलन

प्रो. नागेश दुबे[1], डॉ. मोहन लाल चढ़ार[2]

[1] विभागाध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्त्व विभाग,
डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर, मध्यप्रदेश

[2] एसोसियेट प्राफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्त्व विभाग,
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, मध्यप्रदेश

सारांश

बुन्देलखण्ड को भारत का हृदयाचंल माना जाता है। बुन्देलखण्ड की अपनी विशिष्ठ कला संस्कृति है। भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस क्षेत्र में प्राचीनकाल से लेकर आज तक मानव जीवन के विविध पक्षों की बहुलता दिखाई देती है। इस क्षेत्र के सांस्कृतिक जीवन का प्रतिबिम्ब तत्कालीन कला, संस्कृति एवं साहित्य में देखने को मिलता हैं। बुन्देलखण्ड के लोक साहित्य के साथ कला एवं संस्कृति में धार्मिकता के अनेक आयाम भी हमें देखने को मिलते है। बुन्देलखण्ड चित्रकला, स्थापत्यकला, मूर्तिकला का केन्द्र रहा है। अनेक बुन्देली लोकगीत जनमानस को प्रभावित करते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में बुन्देलखण्ड की कला, संस्कृति एवं साहित्य के दृष्टिकोण से बुन्देलखण्ड के समाज का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

बीज शब्द: *साहित्य, लोक कला, धर्म, संस्कृति एवं समाज इत्यादि।*

प्रस्तावना

बुन्देलखण्ड अपने गौरवमय इतिहास और समृद्ध संस्कृति के लिए विश्व प्रसिद्ध है। भारतीय इतिहास में 'बुन्देलखण्ड' नाम से प्रसिद्ध इस भूखण्ड को प्राचीनकाल से ही अनेक नामों से पहचाना गया। इनमें चेदि, दशार्ण, डाहल एवं जैजाकभुक्ति मुख्य नाम हैं। बुन्देलखण्ड भारत के मध्यभाग में स्थित है बुन्देलखंड को भारत का हृदय स्थल भी कहा जाता है। वर्तमान बुन्देलखंड, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश के विविध जिलों में विस्तारित है। बुन्देलखण्ड कहा जाने वाला यह भूभाग लगभग 80 हजार वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है, इसके अंतर्गत झांसी, जालौन, हमीरपुर, बांदा, ग्वालियर, भिण्ड, मुरैना, गुना, शिवपुरी, रायसेन, जबलपुर, सागर, दमोह, नरसिंहपुर, टीकमगढ़, दतिया, छतरपुर, पन्ना इत्यादि जिले सम्मिलित हैं। प्राचीन भारत के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास में बुन्देलखण्ड की सीमा के अंतर्गत आने वाले भूभाग का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रागैतिहासिक काल से आधुनिककाल तक इस क्षेत्र के विभिन्न भागों में भारतीय संस्कृति अनेक रूपों में परिलक्षित होती है। पाषाणकालीन शैलचित्रकला बुन्देलखण्ड के सागर, जबलपुर, छतरपुर, नरसिंहपुर, दमोह तथा पन्ना, क्षेत्र में मिलती है। प्राचीन काल से ही बुन्देलखण्ड क्षेत्र ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं लोक कलाओं की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में यमुना, नर्मदा, चंबल, तमसा, बेतवा, धसान जैसी महत्वपूर्ण नदियां बहती हैं। लोक साहित्य के अनुसार बुन्देलखण्ड की भौगोलिक स्थिति नदियों के आधार पर इस प्रकार मानी जाती है। **"इत जमुना उत नर्मदा इत चम्बल उत टौंस"** अर्थात यमुना और नर्मदा तथा चम्बल एवं टोंस का मध्यवर्ती भूभाग को बुन्देलखण्ड माना गया है। बुन्देली

कहावतों में भी बुन्देलखण्ड की भौगोलिक संस्कृति की झलक देखने को मिलती है। **"भैस बंधी है ओरछा, पड़ा होशंगाबाद। लगवैया है सागरे, चपिया रेवा पार।।"** इन लोक कहावतों से स्पष्ट होता है कि बुन्देलखण्ड की एक व्यापक सीमा रेखा थी।[1]

शोध विस्तार

बुन्देलखण्ड में स्थित खजुराहो के चंदेलकालीन मंदिर एवं एरण के गुप्तकालीन मंदिर स्थापत्य कला विश्वप्रसिद्ध है। एरण नामक पुरास्थल के उत्खनन में ताम्रपाषाणकालीन संस्कृति के पुरावशेष मिले हैं, जो हड़प्पा सभ्यता के समकालीन हैं। सागर इस पुरास्थल से मौर्य ,शुंग, सातवाहन, शक-क्षत्रप, नाग, गुप्तशासकों के भी अनेक पुरावशेष मिले हैं। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में नौवी सदी ईस्वी से लेकर बारहवीं शती ईस्वी तक चन्देल राजवंश का शासन था।[2] चंदेलकालीन खजुराहो के मंदिरों का स्थापत्य इस क्षेत्र के समाज में वैज्ञानिक एवं विस्तृत सांस्कृतिक जीवन की सोच को प्रदर्शित करता है। खजुराहो की कला में अर्थ, धर्म काम, मोक्ष की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। खजुराहो की कला में मानव जीवन के विविध पक्षों का स्पष्ट स्वरुप देखने को मिलता है। चन्देल काल में इस क्षेत्र को जिझौती या जैजाकभुक्ति जैसे नामों से भी जाना जाता रहा है। चौदहवीं शताब्दी ई. में बुन्देला वंश के आधिपत्य के फलस्वरूप इस भू-भाग का नाम बुन्देलखण्ड पड़ गया था।[3]

पूर्व मध्यकाल में इस क्षेत्र पर चंदेल राजाओं के अलावा कल्चुरी वंश, गौड़ राजवंश एवं दांगी शासकों का आधिपत्य रहा है। सल्तनत काल, मुगलकाल के सुल्तानों, मराठों व अंग्रेंजो ने भी इस क्षेत्र पर राज्य किया था। यहाँ के मंदिर, किले एवं अन्य स्थापत्य के उदाहरण, राजे-रजवाड़ों, रानियों, वीर पुरुषों के पराक्रम, त्याग, बलिदान और बुन्देलखण्ड की जनता के संघर्ष व पुरूषार्थ की कहानियों से हमारा ऐतिहासिक साहित्य भरा पड़ा है। बुन्देलखण्ड के प्राकृतिक सौन्दर्य और वनाच्छादित विंध्यपर्वत श्रृंखलाएँ हर प्रकृति प्रेमी व्यक्ति को मोह लेती हैं। बुन्देलखण्ड के क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत प्राचीन काल से गौरवपूर्ण रही है। इसे प्रत्येक काल में किसी न किसी रूप में सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया। इस क्षेत्र में विभिन्न शासकों द्वारा स्थापित करवाये गये दुर्गों के साथ मंदिरों, मूर्तियों ने भी इस क्षेत्र के अतीत को संरक्षित किया हैं। इनमें कला संस्कृति के साथ-साथ तत्कालीन समाज, धर्म, संस्कृति, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थिति की जानकारी मिलती है। इस क्षेत्र में मध्यकाल में बड़ी संख्या में दुर्ग बनवाये गये थे। इन दुर्गों में अजयगढ़, कालंजर, राहतगढ़ एवं गढ़कुंडार के दुर्ग कला एवं स्थापत्य कला की दृष्टि से उल्लेखनीय रहे हैं।[4]

प्राचीन साहित्य के अनुसार प्रत्येक अंचल की संस्कृति की अपनी पृथक विशेषताएँ होती हैं, उसका एक अलग जीवन दर्शन एवं जीवन मूल्य होते हैं। जिनके कारण क्षेत्रीय संस्कृति अपना विशिष्ट महत्व रखती है। बुन्देली संस्कृति का निर्माण आल्हा और ईसुरी ग्रन्थ मिलकर करते हैं। एक बुन्देली कहावत में कहा गया है कि **"कृष्ण, मुहम्मद, देवनन्द, प्राणनाथ, छत्रसाल। इन पंचन को जो भजे, दुखहारे तत्काल।।"** इस प्रकार ईश्वर एवं शासकों का चिन्तन लोक संस्कृति में देखने को मिलता है। बुंदेली लोकजीवन का प्रतिबिम्ब उसका लोक साहित्य माना जाता है। बुन्देली लोक साहित्य बहुत विस्तृत और सांस्कृतिक तत्वों से परिपूर्ण हैं।[5]

बुन्देलखण्ड में शौर्य गाथाओं की एक लम्बी परम्परा दिखाई देती है। बारहवीं शताब्दी ईस्वी से लेकर बीसवीं शताब्दी ईस्वी के पूर्वार्द्ध तक लिखी गई शौर्य गाथाएँ आल्हा, रासों, कटक और राछरों के रूप में समाज में लोकप्रिय हैं। लोक जीवन में लोक गाथायें बड़े प्रेम और तन्मयता से गाई जाती हैं। यह कथापरक गीत होते हैं। इनमें कहानी गीत के माध्यम से आगे बढ़ती है। लोक गाथाओं में प्रायः लोकनायकों का शौर्य, लोक जीवन में चर्चित प्रेम-गाथायें, देवी-देवताओं के कथापरक प्रसंग तथा पौराणिक आख्यान वर्णित होते हैं। देवी-देवताओं से संबंधित गाथायें एवं गीत 'गोट' के रूप में मिलती हैं। इनमें कारसदेव की गोटें तथा हीरामन की गोटें समाज में अत्याधिक लोकप्रिय हैं। पौराणिक आख्यानों में मोरध्वज-कथा, भरथरी-कथा हरिश्चन्द्र, भगवान शंकर का विवाह तथा स्थानीय आख्यानों में हरदौल-कथा का प्रचलन समाज के प्रत्येक वर्ग में व्याप्त है।[6] इन लोक गाथाओं को लय, ध्वनि एवं गीत की के माध्यम से गाया जाता है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के टीमर समुदाय के लोग आज भी तमूरा या इकतारा के साथ बुन्देली गीत संगीत गाते एवं नृत्य करते हैं। बुन्देली गाथाओं एवं फागों इत्यादि में गायन के साथ नृत्य की भी परम्परा मिलती है।[7] लोकगाथायें बुन्देलखण्ड के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास व साहित्य की

आधारभूमि मानी जाती हैं। बुन्देली गीत संगीत साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त मूल्यमान निधि के रूप में समाज की विविध गतिविधियों की जानकारी के स्त्रोत माने जा सकते हैं। लोकगाथाओं की भाषा आम जन की क्षेत्रीय भाषा ही होती है। लोकभाषा के माध्यम से व्यक्त किये गये भाव इतने सहज और स्वाभाविक होते हैं।[8]

बुन्देलखण्ड की अधिकांश लोकगाथाएँ पद्यात्मक रूप में प्रचलित हैं। ये लोकध्वनियों में आबद्ध की गई हैं। इनमें बुन्देलखण्ड का लोकसंगीत सुरक्षित है। बुन्देलखण्ड के प्रत्येक ऋतु में मनाये जाने वाले त्यौहारों के अपने बुन्देली गीत संगीत समाज में प्रचलित है। ग्रामीण क्षेत्र के अशिक्षित लोगों को सैकड़ों की संख्या में बुन्देली भाषा में भजन, गीत एवं राछरे कंण्ठस्थ हैं। बुन्देली गीतों में 'मल्हार' राग का स्वर स्पष्ट रूप से झलकता है। इस क्षेत्र के अनेक लोक संगीत को लोकवाद्यों के साथ एक क्षेत्रीय विशिष्ट ध्वनि के साथ में गाया जाता हैं। बुन्देलखण्ड में ढोलक, मजीरा, तमूरा, नगड़िया, टपला इत्यादि अनेक लोक वाद्यों के साथ समाज के लोग समूह में मिलकर गाते हैं। बुन्देलखण्ड के पूर्वजों ने लोक साहित्य को लोक जीवन के लिए एक प्रमुख मनोरंजन का साधन बनाया था। इस क्षेत्र के लोग महत्वपूर्ण त्यौहारों एवं विशेष अवसरों पर सार्वजनिक चबूतरों, चौराहों, घरों एवं मंदिरों पर एकत्रित होकर लोकगीतों और लोकगाथाओं को समूह में गायन एवं वादन करके मनोरंजन करते हैं । बुन्देली गीतों को गातें समय एकत्रित सभी लोंगों के तन मन में विशेष उत्साह और उमंग का संचार देखने को मिलता है। बुन्देली गीतों के गायन एवं वादन के साथ लोक संगीत सुन कर सम्पूर्ण जन समुदाय हर्ष विभोर होकर प्रसन्नचित दिखाई देता है। बुन्देली लोकगाथायें अशिक्षित लोकगायकों की विशिष्ट रचनायें मानी जाती हैं।[9] इन रचनाओं में एक क्षेत्रीय भाव, कला एवं काव्य शिल्प दिखाई देता हैं।

लोक नृत्य राई, आल्हा काव्य, संत कवि प्राणनाथ तथा महाराजा छत्रसाल, महारानी लक्ष्मीबाई, दुर्गावती बुन्देलखण्ड क्षेत्र के आदर्श माने जाते है। इस क्षेत्र में लोक कवि ईसुरी की फागें आज भी लोक का कण्ठहार बनी हुई हैं। विवाह, पर्व, व्रतोत्सव तथा अन्य मांगलिक अवसरों पर गाये जाने वाले लोकगीत, लोककथाएँ, लोकनृत्य युगों युगों से अपनी पारम्परिक पहचान अक्षुण्ण बनाये हुए हैं। कहावतें, मुहावरे, लोकाचार, लोकोत्सव, लोकविश्वास, भोजन, वस्त्राभूषण आदि में भी बुन्देली रंग देखने को मिलता है।[10] कर्मा, शैला, राई, सहरिया, बरेदी, करमा, सैरा आदि लोकनृत्य बुन्देली समाज की आन बान एवं शान हैं । बुन्देली भाषा की सामथ्र्य और शक्ति को साहित्य में बखूबी पहचाना जा सकता है। बुन्देली लोक संगीत और लोक चित्रकला का मनोहारी रूप लोगों के मन-मस्तिष्क में आज भी बसा हुआ है।[11]

बुन्देलखण्ड के साहित्यिक उपन्यास 'जूठी पातर' में शिक्षा को अपरिहार्य माना गया हैं। इस उपन्यास के अनुसार "बिखरे हुए राष्ट्र को एक शक्तिशाली राष्ट्र बनाना है। यह हथियार के द्वारा संभव नहीं। शिक्षा और विवेक के द्वारा ही संभव हो सकता है। ईश्वर के प्रति विशेष आस्था और विश्वास इस क्षेत्र के लोगों में देखने को मिलती है। ऐतिहासिक उपन्यास 'बेलकली' में ईश्वर पर पूर्ण विश्वास इस प्रकार देखने को मिलता है। संसार में जो कुछ होता है, ईश्वर की इच्छा से होता है। मनुष्य तो उस सूत्रधार के हाथ की कठपुतली है।"

बुन्देली संस्कृति सर्वधर्म समन्वयवादी रही है। 'जूठी पातर' उपान्यास के अनुसार ईश्वर एक है, धर्म एक है, मनुष्य एक है, सृष्टि एक है। भेदभाव की सारी विभाजक रेखाएं असत्य हैं। उस ईश्वर का पार किसी ने नहीं पाया। वह अनादि है, अनन्त है।' बुन्देली साहित्य में उल्लेख मिलता है कि" मनुष्य, मनुष्य सभी एक हैं। सभी हाड़-मांस के बने हैं। समान सुविधाएँ मिलने पर सभी एक से हो सकते हैं। वर्तमान विषमता स्वार्थी और बेईमान समाज की बनाई हुई है।' बुन्देली स्त्री की धार्मिक आस्था व विश्वास का अटूट सम्बन्ध इस क्षेत्र की संस्कृति में देखने को मिलता है।[12]

प्रकृति से अन्तरंग और व्यापक रिश्ता बुन्देली समाज का है। बुन्देलखण्ड में पृथ्वी, आकाश, बादल, वनस्पति और पशु-पक्षी संबंधी नाना प्रकार के विश्वास प्रचलित हैं। वृक्षों पर देवी-देवताओं का वास, बेलपत्र शिव का आहार, आंवले की पूजा से पापनाश, मृत्यु के समय तुलसीदल मुख में डालने से पापनाश आदि बातें आज भी लोकमानस में सुरक्षित हैं। नदियों के प्रति जनसामान्य का अटूट विश्वास है। नदियों को 'मैया' कहा जाता है। नर्मदा मैया, गंगा मैया, यमुना मैया आदि। 'काला भौंरा' में अगस्त ऋषि के सामने विन्ध्य पर्वत सिर झुका देता है। आध्यात्मिकता बुन्देलखण्ड की संस्कृति की अलग पहचान है। इस क्षेत्र में आध्यात्मिक संस्कृति आज भी पूर्ण रूप से जीवन्त है। बुन्देलखण्ड के लोगों में सेवा परायणता रग रग में बसी

हुई है। मानव-मात्र में सहयोग एवं सद्भावना की जानकारी बुन्देली साहित्य में देखने को मिलती है। स्त्री के प्रति बुन्देली समाज में अपार सम्मान का भाव विद्यमान है। महारानी लक्ष्मीबाई, दुर्गावती आदि नारियाँ विश्व पटल पर बुन्देलखण्ड के गौरव का प्रतीक मानी जाती हैं। बुन्देली साहित्य में मिलता है कि"नारी पुरूष से कहीं अधिक स्पष्ट सोचती है। पुरूष नारी के कहने में चले तो कभी किसी संकट में न पड़े। नारी में श्रद्धा एवं भक्ति भावना होती है।

विंध्याचल पर्वत की श्रृंखलाओं की प्राकृतिक शोभा में डूबा बुन्देलखण्ड का भू-भाग अत्यंत मनोरम है। यहाँ के जन-जीवन में प्रकृति का अपूर्व योगदान है। प्रकृति के बीच उसकी सुषमा एवं सौन्दर्य से प्रभावित होकर बुन्देली जन ने चित्रकला के सहारे प्रकृति की महिमा का गायन किया और प्रकृति का सौन्दर्यांकन भी किया। विभिन्न अवसरों पर दीवारों या भीट पर चित्र बनाने की पुरानी परम्परा है, दीवाली में दीवार पर लाल गेरू के रंग से सुरातु आज भी चित्रित किये जाते हैं, विभिन्न प्रकार के चौक, मंगल कलश पर मांगलिक प्रतीक एवं हाथों पर मेंहदी के आलेखन लोककला की महत्वपूर्ण जानकारी देते हैं। बुन्देलखण्ड की स्त्रियाँ इस दायित्व का निर्वहन पीढ़ियों से करती आ रही हैं। लोक रचनाओं में सुख-दुख, हर्ष-विषाद रीति-रिवाज, संस्कारं-परम्पराओं, लोक साहित्य एवं लोककलाओं में स्त्रियों की भूमिका उल्लेखनीय है। बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक परंपराओं, रीति-रिवाजों, गीत-संगीत की समृद्धि में इस क्षेत्र की स्त्रियों का महत्वपूर्ण योगदान है । बुन्देलखण्ड में स्थित खजुराहो की मूर्तिकला में बनाई गयी मैथुन मूर्तियाँ आकर्षण का केन्द्र हैं। बुन्देली उपन्यास 'खजुराहो की अतिरूपा' में खजुराहो के मंदिरों, मूर्तिकला के निर्माण की जानकारी मिलती है। भैरवी यज्ञ, तंत्र साधना, नरबलि आदि का वर्णन अत्यंत रोचक है। मंदिर के बाहरी भाग और आंतरिक भाग में कामकला को दर्शाने वाली मूर्तियाँ कला और सौन्दर्य का उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इन मूर्तियों की सजीवता का चित्रण बुन्देली साहित्य में भी किया गया है।[13]

बुन्देली लोक साहित्य में कहावतों, मुहावरों, पहेलियों का विशिष्ट स्थान है। कहावतें एवं मुहावरे गागर में सागर भरने का कार्य करते हैं। मुहावरे अपना लक्षणा या व्यंजना मूलक अर्थ रखते हैं। बुन्देलखण्ड में कई पहेलियाँ भी प्रचलित हैं, जिनका उत्तर खोजने में मस्तिष्क को व्यायाम करना पड़ता है। बुन्देलखण्ड में कहावतों या अहानों में महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। इनका प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन होता है। कहावतों का भाव जानकर सुनने वाला अत्यधिक आनंदित होता है। जैसे बुन्देलखण्ड में दूध में पानी मिलाकर बेचने वालों पर व्यंग इस प्रकार है-**'पानी कौ धन पानी में, नाक कटी बेईमानी में'** कुछ बुन्देलखण्डी कहावते इस प्रकार है : **एक दिना के पावने, दूसरे दिना के पई। तीसरे दिना रए तौ बेसरम कई।।** अर्थात मेहमान को किसी के घर एक दिन से अधिक नहीं रुकना चाहिये। **पानी बाढ़ो नाव में, घर में बाढ़े दाम। दोऊ हाथ उलीचिये, यही स्यानों काम।। भाई, भतीजौ, भानजो, भुइयां उर भूपाल। इन पाचऊअन को छोड़के अंत करौ व्यापार।। प्रातः काल करैं अस्नाना। रोग दोष एकौ नही आना।। सूर्योदय, सूर्यास्त में भोजन कबहूँ न खाय। जो मनुष्य भोजन करे, वृद्धि नष्ट हुई जाय। प्रतिदिन भोजन का समय, निश्चित कर जो खाय। मिटै कब्जियत बल बड़ै, अरु जठराग्नि बढ़ाय।।** सौ वर्ष तक जीने (जीवेम् शरदः शतम) की कहावत को चरितार्थ यह पंक्तिया करती हैं : **कातिक दूध अगहन में आलू, पूस पान अरु माघ रतालू। फागुन शकर घी जो पाय। चैत आवला कच्चा खाय, बैशाखे जो खाय करेला, जेठे दाख आषाढ़े केला, सावन निशि में जब तब खाय, भादों व्यारु कबहूँ न पाय, कुआर कामना देव बचाये, तो शत वर्ष आयु हुई जाय।** भोजन न पचने का कारण निम्न कहावत में वर्णित है, **पियें न अधिक जल नित्य जो, बिना भूख जो खाय। अधिक जगे, सोवे अधिक शौच समय नहीं जाय।। भय ईर्ष्या, अरु क्रोध में, तथा लाभ अरु शोक। कबहुँ न भोजन पच सके, जो लघु शंका रोक।।**[14] इन कहावतों को बुन्देलखण्ड के लोगों ने परम्परागत तरीकों सें किसी न किसी रूप में सुरक्षित रखने का प्रयास किया है।

बुन्देली साहित्य का लेखन क्षेत्र, व्यक्ति, समाज, संस्कृति को ध्यान में रख कर किया गया है। इस क्षेत्र में लिखित आल्हाखण्ड, प्रबोधचन्द्रोदय, पृथ्वीराजरासो, काव्यमीमांसा में बुन्देली लोक संस्कृति को उल्लिखित किया गया है। जगनिक द्वारा लिखित आल्हाखण्ड या परमालरासो में आल्हा एवं ऊदल के अनेक युद्धों का वर्णन है। इस ग्रन्थ में तत्कालीन समाज की स्थिति को भी चित्रित किया गया है। आल्हाखण्ड में बुन्देली समाज में किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व देवी देवताओं की उपासना की जानकारी इस प्रकार मिलती है। "सुमर भवानी दाहिने, सनमुख रहे गनेश। पाँच देव रक्षा करे, ब्रह्म, विष्णु, महेश।।[15]

निष्कर्ष

इस प्रकार सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड क्षेत्र समन्वयवादी सांस्कृतिक परम्परा का एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत करता है। भारत के ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक गौरव के विकास में बुन्देलखण्ड का वैशिष्ट योगदान है। यह क्षेत्र प्राचीन काल से विभिन्न कालों में मानव जीवन के लिए प्रेरणा स्त्रोत रहा है। देश के मध्य भाग में होने के कारण सदियों से उत्तर और दक्षिण के मध्य सांस्कृतिक गतिविधियों का संवाहक रहा है। बुन्देलखण्ड में विशालतम, सुदृढ़ दुर्ग कला स्थापत्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन दुर्गों की भौगोलिक स्थिति, सुरक्षा व जल आपूर्ति व्यवस्था उत्तम कोटि की थी। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में दुर्गों की उपस्थिति से स्पष्ट हो जाता है कि यह भू-भाग प्राचीनकाल से अनेक राजवंशों के संघर्ष का क्षेत्र रहा है। ये गौरवशाली दुर्ग, तत्कालीन शासकों एवं कलाकारों की स्थापत्य कला के प्रति गहरी सोच एवं व्यक्तिगत अभिरूचि को भी प्रदर्शित करते हैं। कालिंजर का दुर्ग, अजयगढ़ का किला, खजुराहों का महल, मनियागढ़ स्थापत्य कला के सुंदर उदाहरण माने जाते हैं । खजुराहो चंदेल कालीन स्थापत्य कला का अद्भुत नमूना है। जीवंत कला-वैभव के प्रतीक खजुराहो मंदिरों, मूर्तियों की सूक्ष्म कल्पना स्थापत्य कला एवं मूर्ति विज्ञान के सिद्धांतों के विकास का परिचय देती है। बुन्देली साहित्य में उल्लेख मिलता है कि मूर्तियों में उकेरी गयी उल्लासमयी रूपगर्विता सुंदरियों की आकृतियां मन को बरबस अपनी ओर खींच लेती हैं। यौवन और सौन्दर्य से सर्वांग सुसज्जित, आभूषणों से अलंकृत, वेणी बांधे हुए सुन्दर अप्सराएं रंगमंच के लिए तैयार दिखाई देती है। मूर्तिकला में सुन्दर नारियों को श्रृंगार करते हुए, पत्र लिखते हुए हुए, पैर का कांटा निकालते हुए, निर्वस्त्र मैथुन-मुद्राओं में आनन्द का रसपान करते हुए दिखाया गया है। भारतीय इतिहास में बुन्देलखण्ड के राजवंशों, वीर पुरुषों के पराक्रम, त्याग, बलिदान और इस क्षेत्र की जनता के संघर्ष व पुरूषार्थ की कहानियों की जानकारी मिलती है। बुन्देली साहित्य में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, मुंशी अजमेरी, नाथूराम माहौर, घासीराम व्यास, घनश्याम दास पाण्डेय, अम्बिका प्रसाद दिव्य का नाम उल्लेखनीय है। इस क्षेत्र के कलाकारों ने मूर्तिकला, चित्रकला एवं मंदिरों के माध्यम से तत्कालीन समाज के विविध कार्यकलापों को प्रस्तुत किया है। बुन्देलखण्ड के अनेक लोक गीतकारों, संगीतकारों ने बुन्देली संस्कृति को संरक्षित करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक घटनाओं एवं ऐतिहासिक व्यक्तियों पर केन्द्रित प्रमुख उपन्यास खजुराहों की अतिरूपा, जयदुर्ग का रंगमहल, काला भौंरा, सती का पत्थर, जूठी पातर, जोगीराजा, और प्रेम तपस्वी उल्लेखनीय है। इस प्रकार बुन्देलीं लोक संस्कृति, कला एवं साहित्य के माध्यम से इस क्षेत्र की भाषा, रहन-सहन, खान-पान, बोली, वेष- भूषा को विशेष रूप से सुरक्षित रखा गया है।

सन्दर्भ

1. मिश्रा, जयप्रकाश एवं दुबे राजीव: बुन्देलखण्ड का इतिहास एवं संस्कृति, शिवांश शिवाग्नी प्रकाशन हाउस,जबलपुर,1995,पृ.12
2. चढार, मोहन लाल: एरण एक सांस्कृतिक धरोहर, आयु प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 26
3. मिश्रा, जयप्रकाश एवं दुबे राजीव: बुन्देलखण्ड का इतिहास एवं संस्कृति, पूर्वोक्त, 1995,पृ.122-23
4. चढार, मोहन लाल: बुन्देलखण्ड के दुर्ग: एक अनुशीलन, मेकल मीमांसा, अंक 13, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरंकटंक, मध्यप्रदेश, 2021, पृ. 157-173
5. दुबे, आरती: 'बुन्देली राछरे', ईसुरी, अंक-18, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, 2010-11, पृ.123
6. श्रीवास्तव, बी.के.: बुन्देलखण्ड की संस्कृति, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. 5
7. श्रीवास्तव, श्याम बिहारी: बुन्देलखण्ड की शौर्य गाथाएँ, बुन्देली इतिहास और संस्कृति, आदिवासी लोककला अकादमी, भोपाल, 2005, पृ. 292
8. दीक्षित, दुर्गा प्रसाद: गाथा साहित्य की परम्परा में बुन्देली लोक-साहित्य का अनुशीलन, शोध प्रबन्ध, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा, 1994, पृ.136
9. श्रीवास्तव, अतुल कुमार: बुन्देली में गाथात्मक गीत, ईसुरी, अंक-16, डॉ. हरीसिंहगौर विश्वविद्यालय, सागर, 2009, पृ.115

10. द्विवेदी, कैलाश बिहारी: बुन्देली गथाएँ: रूढ़ियाँ और उद्देश्य, बुन्देली इतिहास और संस्कृति, आदिवासी लोककला अकादमी, भोपाल, 2005, पृ. 263
11. गुप्त, अयोध्या प्रसाद: बुन्देलखण्ड का लोक जीवन, नमन प्रकाशन, उरई, 1997, पृ. 33
12. अम्बिका प्रसाद दिव्य: जूठी पातर, पृ, 190
13. अम्बिका प्रसाद दिव्य: खजुराहों की अतिरूपा, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ, 141
14. श्रीवास्तव, बी.के., बुन्देलखण्ड की संस्कृति, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. 63
15. राजनीश, गोविन्द: लोक महाकाव्य आल्हा, इलाहाबाद, 1995, पृ. 9